अथ चुरादयः

चुर स्तेये 1

सत्याप-पाश-रूप-वीणा-तूल-श्लोक-सेना-लोम-त्वच-वर्म-वर्ण-चूर्ण-चुरादिभ्यो णिच् 3. 1. 25

एभ्यो णिच् स्यात्।

चूर्णान्तेभ्यः 'प्रातिपदिकाद्धात्वर्थे' इत्येव सिद्धे तेषामिह ग्रहणं प्रपचार्थम्, चुरादिभ्यस्तु स्वार्थे।

'पुगन्त-' इति गुणः, सनाद्यन्ता इति धातुत्वम्, तिप्-शबादि, गुणायादेशौ-चोरयति।

व्याख्याः सत्याप, पाश, रूप, वीणा, तूल, श्लोक, सेना, लोमन्, त्वच्, वर्मन्, वर्ण और चूर्ण शब्दों से तथा चुर् आदि धातुओं से णिच् प्रत्यय हो।

णिच् का णकार और चकार इत् है। प्रत्यय केवल इकार बचता है। वह यथाप्राप्त गुण और वद्धि का निमित्त बनता है।

चूर्णान्तेभ्य इति–चूर्ण–पर्यन्त शब्दों से 'प्रातिपादिकाद् धात्वर्थे–' इत्यादि वार्तिक से जो सभी प्रातिपादिकों से ध ाातु के अर्थ में णिच् का विधान करता है–ही णिच् सिद्ध होते हुए भी इस सूत्र में उनका ग्रहण प्रपच अर्थात् विस्तार के लिये है। वास्तव में पूर्वोक्त वार्तिक से सिद्ध होने से वहाँ ग्रहण करना व्यर्थ है।

चुरादिभ्य इति–चुर् आदि धातुओं से णिच् स्वार्थ में होता है अर्थात् णिच् किसी विशेष अर्थ को नहीं प्रकट करता। अतः यह स्वार्थिक है। ण्यन्त प्रक्रिया में जिस णिच् का विधान होता है उसका अर्थ प्रेरणा है, अतएव वह प्रेरणार्थक कहा जाता है।

सनाद्यन्ताः इति–'सनाद्यन्ताः–' यहाँ से 'गुणायादेशौ' यहाँ तक जो मूलपाठ है, उस में 'चोरयति' की सिद्धि का प्रकार बताया गया है।

चोरयति–चुर धातु से णिच् होने पर 'चुर्+इ' इस दशा में णिच् आर्ध–धातुक परे रहते 'पुगन्तलघूपधस्य च' सूत्र से उपधा उकार को गुणा होकर 'चोर इ' बना। तब 'चोरि' की पुनः 'सनाद्यन्ता धातवः' से धातु संज्ञा हुई। धातु संज्ञा होने पर तिप् शप् आदि और णिच् के इकार को गुण अय् आदेश होकर यह रूप लट् प्र० पु० ए. व. में सिद्ध होता है।

यही प्रक्रिया–'पुगन्त–' इति गुणः से बताई गई है।

णिचश्च 1. 3. 74

णिजन्ताद् आत्मनेपदं स्यात् कर्तगामिनि क्रियाफले।

चोरयते। चोरयामास। चोरयिता। चोर्यात्, योरयिषीष्ट।

णिश्रीति चङ्, णौ चङीति ह्रस्वः, चङीति द्वित्वम्, हलादिः शेषः दीर्घो लघोरित्यभ्यासस्य दीर्घः-अचूचुरत्, अचूचुरत।

व्याख्याः णिचश्चति– णिजन्त से आत्मनेपद हो क्रियाफल यदि कर्तगामी हो।

जब क्रियाफल कर्तगाामी हो तब आत्मनेपद और जब कर्तगामी न हो तब परस्मैपद होता है। इससे यह सिद्ध हुआ कि ण्यन्त धातु उभयपदी होती है।

चोरयते–क्रियाफल के कर्तगामी होने से 'कास्प्रत्ययादाम् अमन्त्रे लिटि' से लिट् में आम् प्रत्यय आता है और आमन्त

होने से क, भू, अस् का अनुप्रयोग 'कचानुप्रयुज्यते लिटि' सूत्र से होता है।

चोरयामास–'चोरि' धातु से प्रत्ययान्त होने से आम् हुआ। तब इकार को गुण और अय् आदेश होने पर 'चोरयाम्' बन जाने पर लडन्त अस् का अनुप्रयोग होकर रूप सिद्ध हुआ।

इसी प्रकार 'क' आदि के अनुप्रयोग में भी रूप बनेंगे।

णिजन्त धातु अनेकाच् बन जाती है। इसलिये ये सब सेट् हो जाती है। अतएव चुरादिगण में सभी धातु सेट् हैं, सबसे इट् होता है।

चोरयिता–चोरि धातु से लुट् प्र० पु० ए० व० में इट् होने पर णिच् इकार को गुण और अय् आदेश होकर रूप बन गया।

लट्–चोरयिष्यति। लोट्–चोरयतु। ल्–अचोरयत्। वि०लि०–चोरयेत्।

चोर्यात्–आ० लि० प्र० पु० १ में 'णेरनिटि' सूत्र से णिच् का लोप होकर रूप सिद्ध हुआ।

चोरयिषीष्ट–आ० लि० आ० प० प्र० पु० १ में सीयुट् और सुट् होने पर इट् हुआ। तब णिच् के इकार को गुण और अयादेश हुआ। फिर दोनों सकारों को मूर्धन्य षकार होने पर तकार को ष्टुत्व टकार होकर रूप बना।

णि श्रि इति चङ् इति–'णि श्रि–' यहाँ से लेकर '–अभ्यासस्य दीर्घः' यहाँ तक ण्यन्त धातु के लुङ् के रूपों की सिद्धि का प्रकार कहा गया है। यह प्रक्रिया प्रायः सभी ण्यन्त धातुओं के लुङ् के रूप सिद्ध करने में थोड़े–बहुत अन्तर से होगी।

अचूचुरत्–मूल में बताये गये प्रकार से लुङ् प्र० पु० १ में च्लि को 'णिश्रिद्रुश्रुभ्यः कर्तार चङ् सूत्र से चङ् हुआ। तब 'अ चोर् इ अ त्' इस स्थिति में 'णौ चङ्युपधाया ह्रस्वः' सूत्र से उपधा ओकार को ह्रस्व उकार हुआ। फिर 'चुर्' को 'चङि' सूत्र से द्वित्व हुआ। 'हलादिः शेषः' इस सूत्र से रेफ का लोप हुआ। तब 'अचुचुर् इ अत्' ऐसी स्थिति बनने पर 'सन्वल्लघुनि चङ्परेनग्लोपे' सूत्र से सन्वद्भाव होने पर 'दीर्घो लघोः' सूत्र से अभ्यास के उकार को दीर्घ हुआ। 'णेरनिटि' सूत्र से णि का लोप होकर उक्त रूप बना।

अचूचुरत–यह लुङ् आ० प० का रूप भी पूर्ववत् बनता है।

णिजन्त धातुओं के रूप लुङ् लकार में बनाने कठिन होते हैं। लुङ् में च्लि को चङ् होता है। चङ् होने के फलस्वरूप धातु को द्वित्व होता है। पुनः उपधा ह्रस्व देखना होता है, इसके साथ ही देखना चाहिए कि सन्वद्भाव होता है कि नहीं।

सन्वद्भाव के दो फल हैं एक अभ्यास के अकार को इकार होना और दूसरा अभ्यास के अच को दीर्घ होना। इकार वहीं होता है जहाँ अभ्यास में ह्रस्व अकार होता है। दीर्घ सभी अचों को हो जाता है यदि वह लघु हो। 'अचूचुरत्' में केवल दीर्घ हुआ है। अभ्यास में अकार न होने से इकार नहीं हुआ है। जहाँ अभ्यास में अकार होता है वहाँ इकार और दीर्घ दोनों कार्य होते हैं।

कथ वाक्यप्रबन्धे 2

अल्लोपः

व्याख्याः सेट्। उभयपदी। अग्लोपी। अग्लोपी होने का फल सन्वद्भाव का निषेध है। सन्वद्भाव न होने से लुङ् में अभ्यास के अकार को इकार और दीर्घ नहीं होते।

अल्लोप इति–कथ धातु से णिच् प्रत्यय आने पर 'अतो लोपः' सूत्र से अन्त्य आकार का लोप हुआ।

अचः परस्मिन् पूर्वविधौ 1. 1. 57

परिनिमत्तोजादेशः स्थानिवत् स्यात्; स्थानिभूताद् अचः पूर्वत्वेन दष्टस्य विधौ कर्तव्ये। इति स्थानिवत्त्वात् न उपधावद्धिः-कथयति। अग्लोपित्वाद् दीर्घ-सन्वद्भावौ न अचकथत्।

व्याख्याः परिनिमित अजादेश स्थानिवत् होता है स्थानिभूत अच से पूर्व जिसे देखा गया हो उसे कार्य करना हो तो।

इति स्थानिवत्त्वादिति–इस सूत्र से अकार लोप को स्थानिवद्भाव होने से 'अत उपधयाः' से उपधा अकार की वद्धि नहीं हुई।

कथयति–कथ धातु से णिच् होने पर 'अता लोपः' से अन्त्य अकार का लोप हुआ। तब कथ् इ' इस दशा में अत उपधयाः' सूत्र से वद्धि प्राप्त हुई। अकार लोप को 'अचः परस्मिन्–' सूत्र से स्थानिवद्भाव होने से पूर्व अकार उपधा न हुआ, इसलिये वद्धि नहीं हुई। तब तिप् शबादि और गुण अय् आदेश होकर रूप बना।

अग्लोपित्वाद् इति–अग्लोपी होने से 'कथ' धातु के लुङ् लकार में दीर्घ और सन्वद्भाव नहीं हुए।

अचकथत्–लुङ् प्र० प० १ में च्लि को चङ् आदेश, द्वित्व, अभ्यास–कार्य होने पर रूप सिद्ध हुआ। यहाँ अग्लोपी होने से दीर्घ और सन्वद्भाव नहीं हुए।

गण संख्याने 3

गणयति।

व्याख्याः सेट्। उभयपदी। अग्लोपी।

गणयति–गणु धातु से णिच् आने पर 'अतो लोपः' से अकार का लोप हुआ। उसको स्थानिवद्भाव होने से उपधा वद्धि न हुई। तब 'गणि' की सनाद्यन्त धातु संज्ञा होकर लट प्र० पु० १ में तप् शबादि और गुण, अय् आदेश होकर रूप बना।

ई च गणः 7. 3. 97

गणयतेरभ्यासस्य ईत् स्यात् चङ्परे णौ चादत्। अजीगणत्, अजगणत्।

व्याख्याः गण् धातु के अभ्यास को ईकार भी होता है चङ् परक णि परे रहते।

चाद् इति–चकार कहने से अकार भी रहता है अर्थात् ईकार विकल्प से होता है।

अजीगणत्, अजगणत्–लुङ् प्र० पु० १ में च्लि को चङ्, द्वित्व, अभ्यासकार्य, 'ई च गणः' से अभ्यास के अकार को विकल्प से ईकार हुआ। तब 'णेरनिटि' से 'णि' का लोप होने पर रूप सिद्ध हुआ।

(इति चुरादिगणः)